सम्पादक के नाम

नेमप्लेट

दो साल पहले पुणे जाना हुआ था एक साहित्यिक आयोजन में। वहाँ एक मोहतरमा (जो कार्यक्रम के आयोजकों में से एक थीं) के घर जाने पर देखा कि दरवाजे पर लगी नेमप्लेट पर केवल उन्हीं का नाम है। उनके पतिदेव व्यवसाय के सिलसिले में अक्सर विदेश रहते हैं। संयोग से उस वक़्त वहीं थे। मैंने बातचीत के दौरान यूँ ही पूछ लिया कि नेमप्लेट पर आपका नाम क्यों नहीं है तो उन्होंने बहुत ही सहज भाव से कहा कि इस घर की पहचान इन्हीं से है।

पतिदेव का साहित्य-संस्कृति-स्त्री विमर्श वगैरह से सीधा नाता नहीं था लेकिन यह जज़्बा ही सलाम करने वाला था।

घर में पति के रहते केवल पत्नी के नाम की नेमप्लेट इस दौर की दुर्लभ नेमप्लेट है।

कहीं एक वाट्सएपीय कविता पढ़ी थी कि %जिस घर को मैं दिन-रात संवारती हूँ उस घर पर लगी नेमप्लेट पर मेरा नाम नहीं है।% कविता भले लाउड-सी लगे लेकिन बात तो है।

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते वाले देश के कितने घरों की नाम पट्टिकाओं पर स्त्री का नाम है? डॉक्टर/वकील/इंजीनियर आदि स्त्रियों को छोड़ें क्योंकि वह बोर्ड/नेमप्लेट तो अर्थ से जुड़े हैं।

अब ये न कहिये कि स्त्री का नाम लिख देने से क्या वह सशक्त हो जाएगी।

फिर वह किससे सशक्त होगी। बचाओ-पढ़ाओ वाले जुमलों, 1000 मर्दों पर 900 औरतों के अनुपात, भ्रूण हत्या, बलात्कार, शोषण और संसद में महिला आरक्षण बिल लटकाने से ?

या उसकी अस्मिता को उसके रूप-रंग, उम्र, गॉसिप संबंधी लतीफों-कार्टूनों में विसर्जित कर के ?

किसी घर की पहचान दरवाजे पर पुरुष नाम की चमकती नेमप्लेट से है या घर के भीतर पसीना बहाने वाली से ?

पितृसत्ता परंपरा नहीं एक सोच है जिसे बहुत चतुराई से समाज में प्लांट किया गया है।

पहचान को नकारने वाले इस दौर में दो साल पहले देखी मीनाक्षी भालेराव की उस दुर्लभ-सी नेमप्लेट को सलाम।

- निरंजन श्रोत्रिय

आज़मगढ़ के कलीम जामई पर पुलिस रासुका लगाने का कर रही है षड्यंत्र

प्रति,
पुलिस महानिदेशक उत्तर प्रदेश
लखनऊ.

विषय- राजनीतिक कार्यकर्ता कलीम जामेई पुत्र अज़ीज़ अहमद ग्राम कोरौली खुर्द, थाना सरायमीर, आज़मगढ़ को फर्जी मुकदमे में फंसाने के बाद माननीय हाइकोर्ट इलाहाबाद द्वारा जमानत दिए जाने के बाद रासुका के तहत निरूद्ध करने का षड्यंत्र के संदर्भ में.

महोदय,

कलीम जामेई पुत्र अज़ीज़ अहमद ग्राम कोरौली खुर्द, थाना सरायमीर, आज़मगढ़ को 1 अक्टूबर 2018 को उनके सरायमीर स्थित ढाबे से शाम को सरायमीर पुलिस द्वारा गैर क़ानूनी तरीक़े से उठाए गया. पुलिस की आपराधिक कार्रवाई पर सवाल उठने के बाद फर्ज़ी मुकदमा दर्ज कर जेल भेज दिया गया था. जबकि 26 अप्रैल 2018 को अमित साहू द्वारा फेसबुक पर नफरत भरी साम्प्रदायिक टिप्पणी के खिलाफ़ कार्रवाई की मांग की गई थी. सरायमीर पुलिस द्वारा लाठीचार्ज कर तनाव पैदा करने के बाद जनता पर किए गए मुकदमे के मामले में कलीम जामेई को अभियुक्त बनाया गया था. जिस पर माननीय हाईकोर्ट इलाहाबाद ने कलीम की गिरफ्तारी पर रोक लगा रखी थी.

आपके संज्ञान में लाना चाहेंगे कि पूर्व में भी माननीय हाईकोर्ट के कलीम की गिरफ्तारी पर रोक के आदेश के बावजूद उनको फर्जी मुकदमे में फंसाया गया. ऐसे में 6 फरवरी 2019 को माननीय हाईकोर्ट इलाहाबाद द्वारा दी गयी जमानत के बाद, कलीम से खुन्नस खाई पुलिस ने उनपर रासुका के तहत कार्रवाई करने का षड्यंत्र कर सकती है. यह अंदेशा इसलिए भी है कि 28 अप्रैल 2018 को सरायमीर मामले के अभियुक्त मुहम्मद आसिफ पुत्र इफ्तिखार अहमद ग्राम शेरवां, शारिब पुत्र मुहम्मद शाहिद ग्राम राजापुर सिकरौर, रागिब ग्राम सुरही को न्यायालय द्वारा जमानत दिए जाने के बाद साजिशन रासुका के तहत निरुद्ध कर दिया गया था. इस पूरे मामले में पुलिस की आपराधिक कार्यशैली लगातार सवालों के घेरे में है यहां तक कि कलीम जामई के ढाबे की पुलिस द्वारा की गई तोड़फोड़ के वीडियो तक मौजूद हैं. 28 अप्रैल की घटना के 2 दिन पहले सरायमीर थाना अध्यक्ष द्वारा किया गया मुकदमा स्पष्ट करता है कि पुलिस उनसे निजी रूप से खुन्नस खाई हुई थी. ऐसे में न्यायालय द्वारा जमानत दिए जाने के बाद रासुका के अंतर्गत कार्रवाई का किया जाना न्याय का मखौल उड़ाना होगा.

- राजीव यादव
महासचिव, रिहाई मंच

पंक्चर बनाने वाली क़ौम हमें क्या सिखायेगी???

आपको भी हो सकता है, ऐसी स्थितियों का सामना करना पड़ता होगा....

भाई मैं पंक्चर बनाता हूँ, लेकिन फिर भी आपसे अच्छा लिख लेता हूँ.... मेरे पिता जी पंक्चर बनाते थे लेकिन उन्होंने ऐसी साड़ियाँ और क़ालीन बुनी के दुनिया में उनके सामान से उनका देश पहचाना गया... मेरे दादा पंक्चर बनाते थे, लेकिन उनकी ज़ुबान और उनकी शायरी का डंका पूरी दुनिया में बजा.... मेरे परदादा पंक्चर बनाते हुए वोह ज़ायक़े देकर चले गए, जिनके नाम पर आज के रेस्टोरेंट भी रोज़ करोड़ों अरबों की कमाई करते हैं..... मेरे परदादा के बाप पंक्चर बनाते बनाते देश की वो इमारतें बना गए जिन्हें देखने दुनिया भर से आज भी लोग आते हैं..... उनके बाप दादाओं ने वो नगर सिस्टम और वो टैक्सेशन सिस्टम बना दिया जो आज तक फ़ॉलो होता है.....

तो भई बुरा क्या है पंक्चर बनाने में... बल्कि मैं तो कहता हूँ, अगर पंक्चर बनाने वालों ने इतना कुछ कर लिया और आप न कर पाए तो प्लीज़ दुराग्रह छोड़ें और देश की तरक्की में कुछ योगदान दें..... फ़ेसबुक के बजाय आप भी अपने बच्चों को पंक्चर बनाना ही सिखाएँ....

- हैदर रिज़वी

'सत्यमेव जयते हमारा मोटो है मगर गणतंत्र दिवस की झांकियां झूठ बोलती हैं!'

हरिशंकर परसाई का व्यंग्य, 'ठिठुरता हुआ गणतंत्र'

चार बार मैं गणतंत्र दिवस का जलसा दिल्ली में देख चुका हूं. पांचवीं बार देखने का साहस नहीं. आखिर यह क्या बात है कि हर बार जब मैं गणतंत्र-समारोह देखता, तब मौसम बढ़ा क्रूर रहता. छब्बीस जनवरी के पहले ऊपर बर्फ पड़ जाती है. शीतलहर आती है, बादल छा जाते हैं, बूंदाबांदी होती है और सूर्य छिप जाता है. जैसे दिल्ली की अपनी कोई अर्थनीति नहीं है, वैसे ही अपना मौसम भी नहीं है. अर्थनीति जैसे डॉलर, पौंड, रुपया, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा-कोष या भारत सहायता क्लब से तय होती है, वैसे ही दिल्ली का मौसम कश्मीर, सिक्किम, राजस्थान आदि तय करते हैं.

इतना बेवकूफ भी नहीं कि मान लूं, जिस साल मैं समारोह देखता हूं, उसी साल ऐसा मौसम रहता है. हर साल देखने वाले बताते हैं कि हर गणतंत्र-दिवस पर मौसम ऐसा ही धूपहीन ठिठुरनवाला होता है.

जनसंघी भाई से भी पूछा. उसने कहा-' सूर्य सेक्युलर होता तो इस सरकार की परेड में निकल आता. इस सरकार से आशा मत करो कि भगवान अंशुमाली को निकाल सकेगी. हमारे राज्य में ही सूर्य निकलेगा'

जब कांग्रेस टूटी नहीं थी, तब मैंने एक कांग्रेस मंत्री से पूछा था कि यह क्या बात है कि हर गणतंत्र-दिवस को सूर्य छिपा रहता है? सूर्य की किरणों के तले हम उत्सव क्यों नहीं मना सकते? उन्होंने कहा - जरा धीरज रखिए. हम कोशिश में हैं कि सूर्य बाहर आ जाए. पर इतने बढ़े सूर्य को बाहर निकालना आसान नहीं हैं. वक्त लगेगा. हमें सत्ता के कम से कम सौ वर्ष तो दीजिए.

दिए. सूर्य को बाहर निकालने के लिए सौ वर्ष दिए, मगर हर साल उसका छोटा-मोटा कोना तो निकलता दिखना चाहिए. सूर्य कोई बच्चा तो है नहीं जो अन्तरिक्ष की कोख में अटका है, जिसे आप ऑपरेशन करके एक दिन में निकाल देंगे.

इधर जब कांग्रेस के दो हिस्से हो गए तब मैंने एक इंडीकेट कांग्रेसी से पूछा. उसने कहा – 'हम हर बार सूर्य को बादलों से बाहर निकालने की कोशिश करते थे, पर हर बार सिंडीकेट वाले अड़ंगा डाल देते थे. अब हम वादा करते हैं कि अगले गणतंत्र दिवस पर सूर्य को निकालकर बताएंगे.

एक सिंडीकेटी पास खड़ा सुन रहा था. वह बोल पड़ा - 'यह लेडी (प्रधानमंत्री) कम्युनिस्टों के चक्कर में आ गई है. वही उसे उकसा रहे हैं कि सूर्य को निकालो. उन्हें उम्मीद है कि बादलों के पीछे से उनका प्यारा 'लाल सूरज' निकलेगा. हम कहते हैं कि सूर्य को निकालने की क्या जरूरत है? क्या बादलों को हटाने से काम नहीं चल सकता?

हम नहीं बजा रहे हैं, फिर भी तालियां बज रहीं हैं. मैदान में जमीन पर बैठे वे लोग बजा रहे हैं, जिनके पास हाथ गरमाने के लिए कोट नहीं है. लगता है, गणतंत्र ठिठुरते हुए हाथों की तालियों पर टिका है

मैं संसोपाई (संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी) भाई से पूछता हूं. वह कहता है - सूर्य गैर-कांग्रेसवाद पर अमल कर रहा है. उसने डॉक्टर लोहिया के कहने पर हमारा पार्टी-फॉर्म भर दिया था. कांग्रेसी प्रधानमंत्री को सलामी लेते वह कैसे देख सकता है? किसी गैर-कांग्रेसी को प्रधानमंत्री बना दो, तो सूर्य क्या, उसके अच्छे भी निकल पड़ेंगे.

जनसंघी भाई से भी पूछा. उसने कहा-' सूर्य सेक्युलर होता तो इस सरकार की परेड में निकल आता. इस सरकार से आशा मत करो कि भगवान अंशुमाली को निकाल सकेगी. हमारे राज्य में ही सूर्य निकलेगा.' साम्यवादी ने मुझसे साफ कहा - 'यह सब सीआईए का षडयंत्र है. सातवें बेड़े से बादल दिल्ली भेजे जाते हैं.' स्वतंत्र पार्टी के नेता ने कहा – 'रूस का पिछलग्गू बनने का और क्या नतीजा होगा?'

प्रसोपा (प्रजा सोशलिस्ट पार्टी) भाई ने अनमने ढंग से कहा – 'सवाल पेचीदा है. नेशनल कौंसिल की अगली बैठक में इसका फैसला होगा. तब बताऊंगा.' राजाजी से मैं मिल न सका. मिलता, तो वह इसके सिवा क्या कहते कि इस राज में तारे निकलते हैं, यही गनीमत है.

स्वतंत्रता-दिवस भी तो भरी बरसात में होता है. अंग्रेज बहुत चालाक हैं. भरी बरसात में स्वतंत्र करके चले गए. उस कपटी प्रेमी की तरह भागे, जो प्रेमिका का छाता भी ले जाए. वह बेचारी भीगती बस-स्टैंड जाती है, तो उसे प्रेमी की नहीं, छाता-चोर की याद सताती है.

स्वतंत्रता-दिवस भीगता है और गणतंत्र-दिवस ठिठुरता है. मैं ओवरकोट में हाथ डाले परेड देखता हूं. प्रधानमंत्री किसी विदेशी मेहमान के साथ खुली गाड़ी में निकलती हैं. रेडियो टिप्पणीकार कहता है – 'घोर करतल-ध्वनि हो रही है.' मैं देख रहा हूं, नहीं हो रही है. हम सब तो कोट में हाथ डाले बैठे हैं. बाहर निकालने का जी नहीं हो रहा है. हाथ अकड़ जाएंगे.

यह कितना बड़ा झूठ है कि कोई राज्य दंगे के कारण अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति पाए, लेकिन झांकी सजाए लघु उद्योगों की. दंगे से अच्छा गृह-उद्योग तो इस देश में दूसरा है नहीं

लेकिन हम नहीं बजा रहे हैं, फिर भी तालियां बज रहीं हैं. मैदान में जमीन पर बैठे वे लोग बजा रहे हैं, जिनके पास हाथ गरमाने के लिए कोट नहीं है. लगता है, गणतंत्र ठिठुरते हुए हाथों की तालियों पर टिका है. गणतंत्र को उन्हीं हाथों की ताली मिलती है, जिनके मालिक के पास हाथ छिपाने के लिए गर्म कपड़ा नहीं है. पर कुछ लोग कहते हैं - 'गरीबी मिटनी चाहिए.' तभी दूसरे कहते हैं – 'ऐसा कहने वाले प्रजातंत्र के लिए खतरा पैदा कर रहे हैं.'

गणतंत्र-समारोह में हर राज्य की झांकी निकलती है. ये अपने राज्य का सही प्रतिनिधित्व नहीं करतीं. 'सत्यमेव जयते' हमारा मोटो है मगर झांकियां झूठ बोलती हैं. इनमें विकास-कार्य, जनजीवन इतिहास आदि रहते हैं. असल में हर राज्य को उस विशिष्ट बात को यहां प्रदर्शित करना चाहिए जिसके कारण पिछले साल वह राज्य मशहूर हुआ. गुजरात की झांकी में इस साल दंगे का दृश्य होना चाहिए, जलता हुआ घर और आग में झोंके जाते बच्चे. पिछले साल मैंने उम्मीद की थी कि आन्ध्र की झांकी में हरिजन जलते हुए दिखाए जाएंगे. मगर ऐसा नहीं दिखा. यह कितना बड़ा झूठ है कि कोई राज्य दंगे के कारण अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति पाए, लेकिन झांकी सजाए लघु उद्योगों की. दंगे से अच्छा गृह-उद्योग तो इस देश में दूसरा है नहीं.

मेरे मध्य प्रदेश ने दो साल पहले सत्य के नजदीक पहुंचने की कोशिश की थी. झांकी में अकाल-राहत कार्य बतलाए गए थे. पर सत्य अधूरा रह गया था. मध्य प्रदेश उस साल राहत कार्यों के कारण नहीं, राहत-कार्यों में घपले के कारण मशहूर हुआ था. मेरा सुझाव माना जाता तो मैं झांकी में झूठे मास्टर रोल भरते दिखाता, चुकारा करनेवाले का अंगूठा हज़ारों मूर्खों के नाम के आगे लगवाता. नेता, अफसर, ठेकेदारों के बीच लेन-देन का दृश्य दिखाता. उस झांकी में वह बात नहीं आई. पिछले साल स्कूलों के 'टाट-पट्टी कांड' से हमारा राज्य मशहूर हुआ. मैं पिछले साल की झांकी में यह दृश्य दिखाता - 'मंत्री, अफसर वगैरह खड़े हैं और टाट-पट्टी खा रहे हैं.'

इस देश में जो जिसके लिए प्रतिबद्ध है, वही उसे नष्ट कर रहा है. लेखकीय स्वतंत्रता के लिए प्रतिबद्ध लोग ही लेखक की स्वतंत्रता छीन रहे हैं. सहकारिता के लिए प्रतिबद्ध इस आंदोलन के लोग ही सहकारिता को नष्ट कर रहे हैं

जो हाल झांकियों का, वही घोषणाओं का. हर साल घोषणा की जाती है कि समाजवाद आ रहा है. पर अभी तक नहीं आया. कहां अटक गया? लगभग सभी दल समाजवाद लाने का दावा कर रहे हैं, लेकिन वह नहीं आ रहा. मैं एक सपना देखता हूं. समाजवाद आ गया है और वह बस्ती के बाहर टीले पर खड़ा है. बस्ती के लोग आरती सजाकर उसका स्वागत करने को तैयार खड़े हैं. पर टीले को घेरे खड़े हैं कई समाजवादी. उनमें से हरेक लोगों से कहकर आया है कि समाजवाद को हाथ पकड़कर मैं ही लाऊंगा.

समाजवाद टीले से चिल्लाता है – 'मुझे बस्ती में ले चलो.' मगर टीले को घेरे समाजवादी कहते हैं – 'पहले यह तय होगा कि कौन तेरा हाथ पकड़कर ले जाएगा.'

समाजवाद की घेराबंदी है. संसोपा-प्रसोपावाले जनतान्त्रिक समाजवादी हैं, पीपुल्स डेमोक्रेसी और नेशनल डेमोक्रेसीवाले समाजवादी हैं. क्रान्तिकारी समाजवादी हैं. हरेक समाजवाद का हाथ पकड़कर उसे बस्ती में ले जाकर लोगों से कहना चाहता है – 'लो, मैं समाजवाद ले आया.'

समाजवाद परेशान है. उधर जनता भी परेशान है. समाजवाद आने को तैयार खड़ा है, मगर समाजवादियों में आपस में धौल-धप्पा हो रहा है. समाजवाद एक तरफ उतरना चाहता है कि उसपर पत्थर पड़ने लगते हैं. 'खबरदार, उधर से मत जाना!' एक समाजवादी उसका एक हाथ पकड़ता है, तो दूसरा हाथ पकड़कर खींचता है. तब बाकी समाजवादी छीना-झपटी करके हाथ छुड़ा देते हैं. लहू-लुहान समाजवाद टीले पर खड़ा है.

समाजवाद परेशान है. उधर जनता भी परेशान है. समाजवाद आने को तैयार खड़ा है, मगर समाजवादियों में आपस में धौल-धप्पा हो रहा है

इस देश में जो जिसके लिए प्रतिबद्ध है, वही उसे नष्ट कर रहा है. लेखकीय स्वतंत्रता के लिए प्रतिबद्ध लोग ही लेखक की स्वतंत्रता छीन रहे हैं. सहकारिता के लिए प्रतिबद्ध इस आंदोलन के लोग ही सहकारिता को नष्ट कर रहे हैं. सहकारिता तो एक स्पिरिट है. सब मिलकर सहकारितापूर्वक खाने लगते हैं और आंदोलन को नष्ट कर देते हैं. समाजवाद को समाजवादी ही रोके हुए हैं. यों प्रधानमंत्री ने घोषणा कर दी है कि अब समाजवाद आ ही रहा है.

मैं एक कल्पना कर रहा हूं. दिल्ली में फरमान जारी हो जाएगा – 'समाजवाद सारे देश के दौरे पर निकल रहा है. उसे सब जगह पहुंचाया जाए. उसके स्वागत और सुरक्षा का पूरा बन्दोबस्त किया जाए. एक सचिव दूसरे सचिव से कहेगा – 'लो, ये एक और वीआईपी आ रहे हैं. अब इनका इंतज़ाम करो. नाक में दम है.' कलेक्टरों को हुक्म चला जाएगा. कलेक्टर एसडीओ को लिखेगा, एसडीओ तहसीलदार को.

पुलिस-दफ़्तरों में फरमान पहुंचेंगे, समाजवाद की सुरक्षा की तैयारी करो. दफ़्तरों में बड़े बाबू छोटे बाबू से कहेंगे – 'काहे हो तिवारी बाबू, एक कोई समाजवाद वाला कागज आया था न! जरा निकालो!' तिवारी बाबू कागज निकालकर देंगे. बड़े बाबू फिर से कहेंगे-'अरे वह समाजवाद तो परसों ही निकल गया. कोई लेने नहीं गया स्टेशन. तिवारी बाबू, तुम कागज दबाकर रख लेते हो. बड़ी खराब आदत है तुम्हारी.'

तमाम अफसर लोग चीफ़-सेक्रेटरी से कहेंगे – 'सर, समाजवाद बाद में नहीं आ सकता? बात यह है कि हम उसकी सुरक्षा का इंतजाम नहीं कर सकेंगे. पूरा फोर्स दंगे से निपटने में लगा है.' मुख्य सचिव दिल्ली लिख देगा – 'हम समाजवाद की सुरक्षा का इंतजाम करने में असमर्थ हैं. उसका आना अभी मुल्तवी किया जाए.'

जिस शासन-व्यवस्था में समाजवाद के आगमन के कागज दब जायें और जो उसकी सुरक्षा की व्यवस्था न करे, उसके भरोसे समाजवाद लाना है तो ले आओ. मुझे खास ऐतराज भी नहीं है. जनता के द्वारा न आकर अगर समाजवाद दफ़्तरों के द्वारा आ गया तो एक ऐतिहासिक घटना हो जाएगी.